ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-1* February-2017
Innovation The Research Concept

भारत में मानवाधिकार : समस्या एवं समाधान

सुरेन्द्र सिंह
व्याख्याता,
राजनीति विज्ञान विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान

कर्मवीर सिंह
व्याख्याता,
राजनीति विज्ञान विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान

सारांश

मानवाधिकार ऐसे अधिकार है जो किसी व्यक्ति को मानव होने के नाते अनिवार्य रूप से मिलते हैं या मिलने चाहिए। एक मनुष्य के रूप में जीवन जीने हेतु ये अधिकार अतिआवश्यक हैं। इन मानवाधिकारों का मूल उद्देश्य व्यक्ति को सम्मानपूर्वक गरिमामय मानवीय जीवन व्यतीत करने हेतु उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान करना है। इस प्रकार मानवाधिकार सार्वभौमिक होते हैं और व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक भी।

समाज के हर प्राणी को जीने का अधिकार है तो समाज के हर प्राणी का कर्तव्य भी है कि वह किसी के जीवन में बाधक नहीं बने। सामान्य अर्थ में इसे आधुनिक मानवाधिकार का प्रारंभिक रूप भी कह सकते हैं। यह मानवाधिकार की मौलिक अवधारणा है। आज मानवाधिकार का जो परिशोधित, परिष्कृत एवं विस्तारवादी सम्प्रत्यय हम देखते हैं उसके जड़ में 'जियो और जीने दो' की मूल अवधारणा शामिल है।

मुख्य शब्द : मानवाधिकार, समस्या एवं समाधान

प्रस्तावना

मानवाधिकार का सृजन भी समाज में होता है। सामान्यतया मानवाधिकार से तात्पर्य है लिंग, धर्म, जाति, सम्प्रदाय, देश, आर्थिक स्थिति जैसे भेदभावमूलक विचारों को त्याग कर मानव को समुचित विकास, संरक्षण तथा ससम्मान जीवन जीने का वह अधिकार प्रदान करना जो उसे जन्म के साथ ही प्राप्त हो जाता है। हमारे संविधान में नीति निर्देशक सिद्धांतों तथा मौलिक अधिकारों को इसी भावना को ध्यान में रखते हुए स्थान दिया गया है।

मानवाधिकार की अवधारणा का इतिहास बहुत पुराना है। इस अवधारणा का विकास सत्ता के निरंकुश उपयोग पर अंकुश लगाना है। मध्यकाल में 13वीं शताब्दी में राजा और सामंतों के मध्य हुआ समझौता जिसे 'मैग्नाकार्टा' कहा जाता है, ने मानवाधिकार की पृष्ठभूमि तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इंग्लैण्ड में स्वतंत्रताओं के लिए हुआ यह समझौता 15 जून 1215 ई. को हुआ जिसे मैग्नाकार्टा या ग्रेट चार्टर कहा जाता है। ब्रिटेन में हुई क्रांति (1689 ई.) ने मानवाधिकार की अवधारणा को विस्तार दिया। इस क्रांति में 'बिल ऑफ राइट्स' के द्वारा व्यक्ति की उन मौलिक स्वतंत्रताओं को मान्यता दी गई जिनका अब तक हनन किया जाता रहा था। इसके बाद 1776 को अमेरिकी क्रांति, जिसमें अमेरिका, ब्रिटेन की गुलामी से मुक्त हुआ तथा 1789 की फ्रांस की क्रांति, जिसका मुख्य नारा था–स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व, ने आधुनिक मानवाधिकारों के विकसित होने के लिए आधार भूमि तैयार की।

वर्तमान मानवाधिकार सम्बन्धी गतिविधियां वास्तव में द्वितीय विश्व युद्ध का परिणाम हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान घटित अमानवीय घटनाओं की भर्त्सना करते हुए अमेरिका के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट (1882–1945) का भाषण (1940) जिसमें रूजवेल्ट ने मनुष्य की चार मूलभूत स्वतंत्रताओं का उल्लेख किया था, भविष्य में मानवाधिकार सम्बन्धी घोषणा का मुख्य आधार बना। फ्रेंकलिन की पत्नी एलीनोर रूजवेल्ट (1884–1962) की अध्यक्षता में 1946 में गठित मानवाधिकार आयोग द्वारा तैयार किए गए प्रारूप को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्वीकृत और घोषित किए जाने के साथ ही विश्व समुदाय द्वारा इसे न केवल मान्यता दी गई बल्कि अपने–अपने संविधानों में स्थान देकर विधिक स्वरूप भी प्रदान किया गया। 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा की गई। यह भी एक संयोग है कि संयुक्त राष्ट्र में मानवाधिकारों पर चर्चा हो रही थी उसी समय भारत के संविधान का प्रणयन हो रहा था। हमारे संविधान निर्माता इस तथ्य से पूरी तरह वाकिफ थे और अपने देश के नागरिकों के लिए ऐसी ही व्यवस्था के लिए प्रयत्नशील थे। परिणामस्वरूप भारतीय संविधान में मानवाधिकारों को उच्च स्थान देते हुए उसे

मौलिक अधिकारों के खण्ड में न केवल स्थान दिया गया बल्कि इसकी रक्षा की जिम्मेदारी न्यायपालिका को सौंप कर इसे गारंटीकृत भी किया गया।

भारत में मानवाधिकार

मध्य युग के छोटे कालखण्ड को छोड़कर देखे तो भारत में मानवाधिकार की संस्कृति बहुत पुरानी है। प्राचीन साहित्य चाहे वह वैदिक साहित्य हो या संस्कृत, पालि अथवा प्राकृत साहित्य सभी में मानवाधिकारों को आवश्यक तत्व के रूप में शामिल किया गया है। यही नहीं इस प्राचीन कालीन साहित्य में सहअस्तित्व की भावना तीव्ररूप में हर क्षेत्र में दिखाई देती है। चाहे वह वन्यजीवों के सम्बन्ध में हो या प्रकृति में पाई जाने वाली वनस्पतियों, पेड़–पौधों आदि के सम्बन्ध में हो।

हमारे देश में प्रत्येक युग में मानवाधिकर के महत्व को स्वीकार किया गया है। महात्मा बुध ने ''बहुजन हिताय बहुजन सुखाय'' का सन्देश दिया था। सूर, कबीर, तुलसी, रैदास आदि ने भी अपनी रचनाओं से मानव अधिकारों के महत्व को समाज के सामने रखा। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने 20वीं सदी में मानवाधिकारों के लिए अपने संघर्ष में अपना जीवन अर्पित कर दिया। उन्होंने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अस्मिता, समानता और मानवीय मूल्यों के लिए संघर्ष किया। डॉ. अम्बेडकर ने समाज के निम्न वर्ग के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक अधिकारों को मानव अधिकारों से जोड़ा। यह आश्चर्य का विषय है कि आजादी के इतने वर्षों के बाद भी शोषण, अन्याय, छूआछूत, स्त्री–पुरुष असमानता का अस्तित्व बना हुआ है, जिसके कारण मानव अधिकारों का हनन आज भी किया जा रहा है।

वर्तमान युग में संगठित रूप में भारत में नागरिक अधिकार आन्दोलन की शुरूआत 1936 में 'सिविल लिबर्टीज यूनियन' के गठन के साथ हुई। इसके गठन में पंडित जवाहर लाल नेहरू की मुख्य भूमिका थी। स्वतंत्रता के बाद इस यूनियन की सक्रियता कम हो गई। संभवतः यह माना गया कि भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले संविधान के लागू होने के बाद इसकी आवश्यकता नहीं रही।

संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार घोषणा–पत्र पर भारत ने 1948 में हस्ताक्षर किये थे। तथापि लगभग एक वर्ष पूर्व निर्मित भारत के संविधान में मौलिक अधिकारों के माध्यम से मानवाधिकारों को मान्यता दी जा चुकी थी। संविधान के खण्ड तीन में विधि के समक्ष समानता (अनुच्छेद 14), धर्म मूलवंश, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध (अनुच्छेद 15), अवसर की समानता (अनुच्छेद 16), अस्पृश्यता का अंत (अनुच्छेद 17), वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 19), अपराधों के लिए दोषसिद्धि के सम्बन्ध में संरक्षण (अनुच्छेद 20), प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता (अनुच्छेद 21), मानव के दुर्व्यापार एवं बलात् श्रम का प्रतिशेध (अनुच्छेद 24), धर्म की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 29, 30) इत्यादि अधिकार भारत के नागरिकों (कुछ मामलों में अनागरिकों को भी) को प्रदान किए गए हैं। इतना ही नहीं संविधान में इन अधिकारों की रक्षा के लिए अनुच्छेद 32 एवं अनुच्छेद 226 में सांविधानिक उपचार भी दिए गए है। केन्द्र सरकार द्वारा इन अधिकारों के संरक्षण तथा संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित किए जाने वाले मानवाधिकारों सम्बन्धी अभिसमयों, प्रसंविदाओं के सम्यक् पालन हेतु तथा सम्बन्धित उत्तरदायित्वों के सम्यक् निर्वहन हेतु 1993 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया।

राष्ट्रीय मानवाधिकर आयोग का गठन मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के अन्तर्गत किया गया है। आठ सदस्यीय राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का अध्यक्ष किसी पूर्व मुख्य न्यायाधीश को बनाया जाता है तथा 7 अन्य सदस्यों में राष्ट्रीय महिला आयोग के अध्यक्ष, एससी–एसटी आयोग के अध्यक्ष, अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष, सेवानिवृत्त न्यायाधीश तथा दो विशेषज्ञ होते हैं।

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 में सभी राज्यों को मानवाधिकार आयोग के गठन का भी निर्देश दिया गया है। अधिनियम में मानवाधिकार संबंधी मामलों के त्वरित निपटान हेतु प्रत्येक जिला–मुख्यालय पर एक मानवाधिकार न्यायालय की स्थापना तथा अधिनियम की धारा 31 के अनुसार इन न्यायालयों में अभियोजन अधिकारियों की नियुक्ति का भी प्रावधान है।

भारतीय संविधान में सभी मानवाधिकारों को शामिल किया गया है। प्रस्ताव, मौलिक अधिकार, नीति निदेषक तत्वों के द्वारा देश के नागरिकों को वे सभी अधिकार देने के प्रयत्न किए गए हैं जिन्हें संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार की सार्वभौम घोषणा में स्थान दिया गया है। संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि 'हम सभी भारतवासी अपने समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता, व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने का सत्यनिष्ठा के साथ संकल्प लेते हैं।' संविधान के प्रस्ताव के इस मंतव्य को मूल अधिकार तथा नीति निर्देषक खण्ड में स्थान देकर पुष्टीकृत भी किया गया है। किन्तु क्या ये सभी अधिकार वास्वत में देश के नागरिकों को प्रदत्त हैं और यदि ऐसा है तो समय–समय पर मानवाधिकार उल्लंघन के प्रकरण क्यों सामने आते हैं। इसके कई कारण हैं–

प्रथमतः कई मामलों में सरकार द्वारा स्वयं मानवाधिकर विरोधी कानून बनाए गए हैं।

दूसरा समाज द्वारा समय–समय पर इनका उल्लंघन या हनन किया जाता है। यहां समाज से तात्पर्य सरकारी एजेसियां भी हैं।

तीसरा हमारे देश में लागू मानवाधिकर विरोधी प्रथाओं एवं गलत परम्पराओं का अनुकरण भी इसके लिए जिम्मेदार है।

भारत में मानवाधिकार हनन : एक समस्या

भारतीय समाज में मानवाधिकारों का सर्वाधिक हनन निर्धन गरीब व्यक्तियों या नारियों के संदर्भ में होता है। पुलिस विभाग को भी मानवाधिकार के हनन में सर्वाधिक दोषी पाया जाता है। बाल श्रमिकों का नियोजन, बंधुओं मजदूरी की प्रथा, आदिवासियों का शोषण, बड़े बांध, जलाषयों, विद्युत परियोजनाओं के निर्माण में बड़ी संख्या में स्थानीय निवासियों का विस्थापन, जंगल और

जमीन पर जन सामान्य के अधिकारों की अस्वीकृति आदि मानवाधिकारों का खुला उल्लंघन हैं। इस प्रकार के प्रकरणों में नागरिक अधिकार सम्बन्धी अनेक याचिकाएं न्यायालयों में आए दिन दायर की जाती हैं। इनमें से अधिकांश मामलों में सरकार ही दोषी पाई जाती है। कहने का आशय है कि जब सरकार ही मानवाधिकारों का उल्लंघन करने को तत्पर है तो सामान्य जन अपने अधिकारों की रक्षा कैसे कर सकता है। यह विडम्बना ही तो है।

21वीं सदी की व्यापक तकनीकी, आर्थिक तरक्की की चकाचौंध के बीच कई अंधेरे आज भी आदिम युग के अवशेषों के रूप में यत्र–तत्र बिखरे हुए हैं। प्रतिदिन करोड़ों–अरबों का व्यापार करने वाले महानगर में आपको भूख भी आसपास ही कहीं दुबकी नजर आ जायेगी। पांच सितारा स्कूलों के साये में ही निरक्षरता हाथ–पांव मारती दिख जायेगी, मानव नस्ल के अधिक परिष्कृत, अधिक सुसंस्कृत होने के खुशफहमी भरे दावों के बीच मानव द्वारा मानव पर वीभत्सतम यातनाओं और अत्याचारों के रोंगटे खड़े कर देने वाले मामले सामने आते रहते हैं। विकास ओर परिष्कार की सैकड़ों साल की यात्रा के बाद भी आज हम प्रत्येक मानव के बुनियादी अधिकार दिलाने के लिए जूझ रहे हैं, जो सभ्यता की पहली चेतना के साथ ही सबको सहज उपलब्ध हो जाने चाहिए थे।

इसमें कोई शक नहीं कि इस दौरान मानवाधिकारों के क्षेत्र में एक तरफ निश्चित ही काफी तरक्की हुई है। इसके प्रति जागरूकता बढ़ी है, लेकिन आज भी मानवाधिकारों का हनन बदस्तूर जारी है। मानव–मानव के रूप में जीने के लिए संघर्षरत है। कहीं धनबल, बाहुबल, सामंतवाद अथवा राजनीतिक सत्ता का मद उसे उसके अधिकारों से वंचित कर रहा है, तो कहीं सत्ता की अकर्मण्यता एवं अनिच्छा इसे इन अधिकारों से दूर रखे हुए है। प्रारम्भ में मानव अधिकारों का हनन घर से ही शुरू हुआ। घरेलू हिंसा और मानसिक प्रताड़ना लगभग हर देश, हर समय, झोपड़पट्टी से लेकर आलीशान महलों तक यह रोग उपस्थित देखा गया है। समाज में धर्म, सम्प्रदाय, जाति, लिंग, रंग आदि के नाम पर भेदभाव एवं प्रताड़ना किसी न किसी रूप में देखने को मिलती है, जो सम्मानजनक जीवन जीने के अधिकार को चुनौती देती रहती है। भारत में जहाँ साम्प्रदायिक एवं जातीय हिंसा आम बात है, वहीं सम्पूर्ण विश्व में भी नस्लीय हिंसा देखने को मिलती है। कहने को गुलामी प्रथा का उन्मूलन हो चुका है, लेकिन कर्ज, भूख और गरीबी के चक्रव्यूह में फंसे कई गुलाम आज भी मुक्ति की बाट जोह रहे हैं। अब भी यह संघर्ष जारी है। शिक्षा से वंचित रोजी–रोटी की जुगाड़ में जीवन बीत रहा है। बाल श्रम कानूनों को अंगूठा दिखाता हुआ समाज बचपन को असमय समाप्त करता जा रहा है।

चिकित्सा विज्ञान ने जहां एक ओर उल्लेखनीय उपलब्धियां दर्ज की है, वहीं आज भी मलेरिया, डेंगू ज्वर जैसे मामूली रोगों से लाखों जानें जा रही है। विडम्बना यह भी है कि खुद डॉक्टर भी मानव अंगों की चोरी करके अरबों रुपये कमा रहे हैं। कन्या भ्रूण हत्यायें होना मानव अधिकार के हनन का ज्वलंत प्रश्न है। दुःख की बात यह है कि इतनी तेज प्रगति के बाद भी हम मानवाधिकार हनन के इस रूप को मिटा नहीं पाये है। एनकाउंटर के नाम पर सुनियोजित हत्यायें की जाती हैं। विकास के नाम पर सड़क, पुल, बांध हो या फिर शॉपिंग माल, इनके निर्माण के पीछे अपना घर, अपनी जमीन और कई बार अपनी आजीविका भी विकास के नाम पर गरीब ही चुकाता है। अपना हक मांगने पर वह विकास विरोधी माना जाता है। समाज में हाशिए पर पड़ा व्यक्ति विकास के नाम पर धोखा पाता है या और अधिक हाषिए पर धकेल दिया जाता है, क्या यह समाज में गरीब तबके के अधिकारों का हनन नहीं है।

मानव अधिकारों का सम्बन्ध व्यक्ति की गरिमा से है एवं आत्मसम्मान का भाव, जो व्यक्तिगत पहचान को रेखांकित करता है तथा मानव समाज को आगे बढ़ाता है। संक्षेप में कह सकते हैं कि मानवाधिकार मनुष्य के जीवन, उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व के विकास के लिए अत्यन्त अनिवार्य है। दुनिया में सबसे अधिक अपराध महिलाओं के खिलाफ ही होते हैं।इसी कारण महिलाओं के मानवाधिकार अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाते हैं। विष्व के अधिकतर देशों में महिलाओं को विशेष अधिकार दिये गये हैं, ताकि वे सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें। महिला आन्दोलन के दौर में एक ओर जहां महिलाओं को अधिक से अधिक अधिकार दिये जाने की कोशिश की जा रही है, वहीं दूसरी ओर महिलाओं के बीच भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ रही है। आधुनिक सभ्य समाज में भी महिलाओं के विरूद्ध हर तरफ अपराध बढ़ रहे हैं। घर हो या बाहर, स्कूल हो या सार्वजनिक स्थल, ऑफिस हर जगह महिलाओं को अनेक प्रकार के अपराधों का सामना करना पड़ता है। महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ ने भी समय–समय पर काफी प्रयास किये हैं। भारतीय संस्कृति में महिलाओं को सदैव उच्च व सम्माननीय स्थिति प्राप्त रही है, परन्तु आज के वर्तमान युग में महिलाओं को अत्यन्त दयनीय हालत से गुजरना पड़ता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक आज भी महिलायें उपेक्षायें और तरह–तरह की वर्जनाओं की शिकार है। सर्वाधिक चिन्ताजनक पहलू यह है कि महिलाओं के कार्यों को न तो महत्व दिया जाता है और न ही उनका आर्थिक मूल्यांकन किया जाता है। जबकि आम महिला पुरुष से अधिक कार्य करती है।

यूनेस्को के महिलाओं की दशा से सम्बन्धित अध्ययन से ज्ञात होता है कि विश्व में भारतीय महिलायें 99वें स्थान पर है। भारत में प्रतिवर्ष 150 लाख बच्चियां जन्म लेती है, जिनमें से 25 प्रतिशत की मृत्यु 15 वर्ष की उम्र से पहले ही हो जाती है। स्पष्ट है कि महिलायें अपने अधिकारों के साथ–साथ अस्तित्व के लिए भी जूझ रही है। महिलाओं का अपहरण चूक गम्भीर सामाजिक अपराध होने के साथ–साथ मानवाधिकारों का हनन भी है। महिलाओं का अपहरण कामेच्छा की पूर्ति, बेचने हेतु, जबरन विवाह, वैश्यावृत्ति, आधिपत्य स्थापित करने की दृष्टि से, पुरुष द्वारा अपने अहं की तुष्टि हेतु किसी व्यक्ति विशेष से बदला लेने के लिए आदि अनेक कारणों से होता है। सामाजिक निन्दा, लोक–लाज एवं पुलिस के नकारात्मक दृष्टिकोण तथा असहयोगी व्यवहार के कारण

ऐसी घटनाओं की रिपोर्ट भी दर्ज नहीं करायी जाती है। दहेज जैसी सामाजिक बुराई के कारण महिलाओं को ही तिरस्कार अनादर एवं मानसिक शारीरिक यंत्रणाओं के दौर से गुजरना पड़ता है। अधिकतर समाजशास्त्रियों का मत है कि महिला हिंसा एवं अपराध के लिए समाज ही दोषी है। भारतीय समाज में संतान के रूप में पुत्र को महत्व देना ही महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव का प्रमुख आधार है। वर्तमान समय में अनेक महिला मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने यह मत व्यक्त किया है कि महिलाओं के व्यवसायीकरण पर तुरन्त रोक लगनी चाहिए। प्रचार के लिए महिलाओं के सौन्दर्य एवं शरीर का उपयोग बन्द होना चाहिए।

मानवाधिकारों के हनन के संदर्भ में यह बात भी उभर कर सामने आयी है कि नैतिक शिक्षा का अभाव महिलाओं के प्रति बढ़ रहे अत्याचार एवं उन्हें अधिकारों से वंचित रखने में काफी हद तक जिम्मेदार है। कानूनविद् न्यायालय की प्रक्रिया एवं विलम्ब को भी महिला उत्पीड़न के लिए दोषी मानते हैं। ऐसी भी धारणा है कि बलात्कार जैसे प्रकरणों की सुनवाई करने वाले न्यायाधीश भी कभी–कभी संवेदना शून्य हो जाते हैं। वे अभियोजिका का प्रतिपरीक्षण करते समय अभियोजिका की परेशानी एवं मर्यादा हनन पर ध्यान नहीं देते हैं। अनेक तथ्य इस बात को प्रमाणित करते हैं कि महिलाओं के प्रति होने वाले अपराध व शारीरिक हिंसा केवल भारत की ही नहीं, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। यद्यपि महिलाओं को भी उनके मानवाधिकारों से अवगत कराकर उन्हें सजग एवं जागरूक बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं। फिर भी जब तक महिलायें अपने अधिकारों के प्रति सचेत नहीं होती, तब तक ये प्रयास सफल नहीं हो सकते हैं। महिलाओं को अपने अधिकार हेतु स्वयं प्रयास करने होंगे तथा अपने को बाजार की वस्तु या व्यापार की वस्तु के रूप में प्रस्तुत करने से अलग करना होगा। आधुनिकता, सभ्यता के नाम पर परोसी जा रही नग्नता या अश्लीलता से महिलाओं को स्वयं ही मुक्त होना होगा। यही वे कारण या अवरोध हैं जिनके कारण महिलायें अपने मानवाधिकारों से वंचित रहती है।

भारत जैसे बहुभाषायी और बहुधार्मिक दश में मानवाधिकारों के प्रवर्तन में अनेक व्यवहारिक उलझने सामने आती रहती है। गरीबी, निरक्षरता, भुखमरी, पलायन, जातिवाद, विषमता, आतंकवाद, कुपोषण कुछ ऐसी ही उलझने हैं। जातिवादी हिंसा का वीभत्स रूप अचानक मानवाधिकारों के सामने अवरोध बनकर खड़ा हो जाता है। आज ऐसी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों का निर्माण करने की आवश्यकता है, जिनमें मानव अधिकारों के उपभोग और उनकी वैधानिक मान्यता स्वीकृत हो और उनकी सुरक्षा हो। इसके बिना मानवाधिकारों की सभी घोषणायें मात्र कागजी खानापूर्ति बनी रहेगी, वे कभी साकार रूप नहीं ले सकेंगी।

पुलिस और मानवाधिकार

पुलिस और मानवाधिकार पारस्परिक रूप से एक–दूसरे से सम्बद्ध हैं। सामान्यतया मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों में पुलिस विभाग की सर्वाधिक संलिप्तता पाई जाती है। अपराधियों से निपटने के लिए प्रायः पुलिस विभाग को मारपीट और प्रताड़ना का सहारा लेना पड़ता है ऐसी स्थिति में अपराधी के मानवाधिकारों के उल्लंघन की संभावना लगातार बनी रहती है। महिलाओं के मामले में पुलिस को और भी संवेदनषील और सतर्क होना पड़ता है। पुलिस अभिरक्षा में महिलाओं के शारीरिक शोषण का खतरा बना रहता है। इसीलिए यह नियम बनाया गया है कि महिलाओं को सूर्यास्त के बाद एवं सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार न किया जाए। न्यायालय भी पुलिस हिरासत में किसी महिला के मानवाधिकार हनन को बहुत गंभीरता से लेते है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग एवं पुलिस षिकायत प्राधिकरण भी प्रयास में हैं कि ऐसी घटनाओं पर रोक लगे तथा अपराधी को कड़ी से कड़ी सजा मिले। पुलिस अभिरक्षा में महिलाओं के साथ होने वाले उत्पीड़न, विशेष तौर पर यौन उत्पीड़न पर सर्वोच्च न्यायालय बहुत गंभीर है और समय–समय पर दिशा–निर्देश भी दे चुकी है। किन्तु इस सब स्थितियों के बावजूद मानवाधिकारों के उल्लंघन की शिकायतों में बढ़ोतरी हो रही है।

पुलिस विभाग को मानवाधिकारों के प्रति जागरुक करने के लिए राष्ट्रीय पुलिस अकादमी हैदराबाद तथा राज्य पुलिस प्रषिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में अब मानवाधिकार विषय को भी शामिल कर लिया गया है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग तथा राज्य मानवाधिकार आयोग विशेष तौर पर पुलिस द्वारा किये गए मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों में बहुत सतर्क हैं और त्वरित कार्यवाही करते हैं। मानवाधिकार आयोग ने सभी जिला मजिस्ट्रेटों तथा जिला पुलिस अधीक्षकों को निर्देश किया है कि पुलिस अभिरक्षा में हाने वाली सभी मौतों तथा बलात्कार आदि की घटनाओं की सूचना 24 घंटे के अंदर आयोग को दी जाए।

कार्यालयों, घरों तथा कार्य के अन्य स्थलों पर यौन उत्पीड़न की घटनाएं प्रायः घटती हैं। मानवाधिकारों के उल्लंघन के क्षेत्र में यह अति संवेदनशील मामला है। यह सर्वमान्य सत्य है कि स्त्री और पुरुष के मध्य जो लैंगिक अंतर है उसे हटाया नहीं जा सकता है किन्तु लैंगिक संवदेनशीलता के मामले में हमारा यह पिछड़ापन इस बात का सबूत है कि हम मानवाधिकारों को लेकर गंभीर नहीं हैं। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा महिलाओं के यौन उत्पीड़न पर कई बार दिशा–निर्देश (विशाखा गाइडलाइन्स) जारी करने के बाद केन्द्र सरकार द्वारा इस संबंध में कानून भी बना दिया गया है। 'लैंगिक संवेदनशीलता' को पाठ्यक्रम में भी शामिल करने पर विचार किया जा रहा है। किन्तु महिलाओं के मानवाधिकारों के प्रति हमें स्वयं ही जागरुक होना होगा।

समाधान एवं सुझाव

यद्यपि मानव अधिकारों को विश्व भर में मान्यता मिल चुकी है तथापि भारत जैसे देश में अभी यह शैषवावस्था में ही है। हमारे यहां इसके प्रति वह जागरुकता नहीं है, जिसकी अपेक्षा है। हालांकि केन्द्र सरकार द्वारा पिछले कुछ वर्षों में इस दिषा में कई ठोस उपाय किए गए हैं। महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, खाद्य सुरक्षा कानून आदि इस दिशा में कुछ ठोस कदम हैं। इनके द्वारा उन

मानवाधिकारों को मान्यता दी गई है जिन्हें संविधान के मूल अधिकारों में स्थान नहीं मिल सका था। पूर्व के वर्षों में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग का गठन भी केन्द्र सरकार द्वारा किया जा चुका है।

कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न रोकने हेतु अधिनियम, रैगिंग के विरुद्ध अधिनियम, बाल श्रमिक पुनर्वास कोष की स्थापना इत्यादि सरकारी कदमों को इस दिशा में ठोस उपाय की संज्ञा दी जा सकती है। किन्तु इसके अतिरिक्त अभी भी अनेक कार्य इस दिशा में किए जाने हैं। इनमें सबसे आवश्यक कार्य है जनसाधारण को मानवाधिकारों के प्रति जागरुक बनाना। सही बात तो यह है कि इस दिशा में सरकार द्वारा कोई ठोस कार्य नहीं किया गया है। इसके लिए कुछ सुझाव इस प्रकार है–

1. मानवाधिकार को शुरुआती स्तर के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाए।
2. निरक्षर जनता के लिए विधिक साक्षरता कार्यक्रम चलाया जाए और उसमें मानवाधिकार को भी एक विषय के रूप में शामिल किया जाए।
3. मानवाधिकारों के प्रति जागरुकता के लिए संचार माध्यमों का उपयोग किया जाए।
4. स्वैच्छिक संगठनों को मानवाधिकार के प्रति जागरूक किया जाए।
5. सरकारी संस्थानों, कार्यालयों को मानवाधिकारों के प्रति समय–समय पर सतर्क करने हेतु परिपत्र जारी किए जाए।
6. मानवाधिकारों की दिशा में कार्यरत संस्थानों, स्वैच्छिक संगठनों का चिन्हीकरण किया जाए तथा उन्हें विशेष प्रोत्साहन दिया जाए।
7. मानवाधिकारों को समाज में जन–आन्दोलन के रूप में प्रसारित किया जाए।

उद्‌देश्य

आज मानवाधिकार की अवधारणा महत्वपूर्ण हो गयी है। मानव अधिकार आंदोलन की उपादेयता तभी है, जब समाज से सभी प्रकार के भेदभाव का अन्त हो। किन्तु वर्तमान राजनैतिक तंत्र इस राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो पा रहा है। आज भी भारतीय एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखने पर मानवाधिकार की विभिन्न समस्याएँ दृष्टिगोचर होती है जो मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के कारण उत्पन्न हुई है। इसलिए प्रस्तुत शोध पत्र में बुद्धिजीवियों, साहित्यकारों, राजनेताओं, मनोवैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिकों के सार्थक चिन्तन, मनन एवं गंभीर विचारों को रखा गया है जिसमें विश्व की गंभीर समस्या मानव अधिकारों के हनन एवं सरंक्षण की दशा, दिशा एवं इसका भावी समाधान कैसे हो? इस पर प्रकाश डाला गया है तथा मानव अधिकारों के प्रति जनता ज्यादा जागरूक हो एवं प्रशासन भी अपनी पूरी जिम्मेदारी निभाएं। यही इस शोध पत्र का उद्‌देश्य है।

निष्कर्ष

वस्तुतः मानवाधिकार रणनीति नहीं, व्यवस्था का विषय है। यह मानवतावाद की सर्वोत्तम अभिव्यक्तित्व व उत्कृष्ट व्यावहारिकता है। मानाधिकार की संकल्पना अत्यधिक व्यापक है। इसलिए मानवता के समक्ष जो भी समस्याएँ उपस्थित है उन सभी का समाधान करना ही इस संकल्पना का लक्ष्य है। जैसा कि एन जयपालन ने लिखा भी है कि ''मानवाधिकारों एवं स्वतंत्रता की रक्षा के लिए प्रत्येक राष्ट्र या राज्य में संवैधानिक उपलब्धि एवं गारण्टी दी गयी है, लेकिन ये केवल शब्दों में सजे हैं। इन सभी को व्यवहार में लाना चाहिए।'' विकास के नाम पर मानवाधिकरों का हनन नहीं किया जाना चाहिए। सूचना संचार द्वारा लोगों में जागरूकता लाकर मानवाधिकार के पहलू को सशक्त बनाया जा सकता है। न्यायिक सक्रियता ने भी मानवाधिकारों को संबल प्रदान किया है। अन्ततः मानवाधिकारों के हनन को सहिष्णुता की संस्कृति व कानून का परिपालन करने की सजगता द्वारा ही रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *अग्रवाल, एच.ओ.; मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशसन्स, इलाहाबाद*
2. *अंसारी, एम.ए.; महिला एवं मानवाधिकार, ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2003*
3. *कटारिया, सुरेन्द्र; मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, आर.बी.एस. पब्लिकेशन, जयपुर, 2003*
4. *पाण्डेय, जे.एन; भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 1994*
5. *रैना, विनोद; भारत में सामाजिक आंदोलन, 2004*
6. *सिंह, राजबाला; मानवाधिकार एवं महिलाएँ, आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2006*
7. *सिन्हा, एस.पी.; ह्यूमन राइट्स फिलासफिकली, इण्डियन जर्नल ऑफ इण्टरनेशनल लॉ, वॉल्यूम 18*
8. *सुब्रह्मण्यम, एस.; पुलिस एवं मानवाधिकार, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007*
9. *तारकुंड, वी.एम.; मानवाधिकारों का दर्शन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995*
10. *त्रिपाठी, डी.पी; मानवाधिकार, इलाहाबाद लॉ एजेन्सी पबिलकेशन, इलाहाबाद*